International Journal of Engineering, Management, Humanities and Social Sciences Paradigms (IJEMHS)
Volume 35, Issue 02 and Publication Date: 22nd April, 2023
An Indexed, Referred and Peer Reviewed Journal
ISSN (Online): 2347-601X
www.ijemhs.com

पूर्व मध्यकालीन बिहार में शिक्षा का विकास का ऐतिहासिक अध्ययन

रंजु कुमारी
शोध छात्रा, इतिहास विभाग, बी. एन. एम. यू., मधेपुरा, बिहार

सार

इस काल के शासक शिक्षा के प्रेमी थे और लगभग सल्तनत कालीन सुल्तानों ने अपने–अपने ढंग से शिक्षा को बढ़ावा दिया था जिसका विवरण यहाँ विभिन्न साधनों के आधार पर किया गया है।

एक आधुनिक इन्डोलॉजिस्ट के अनुसार भारत मं शिक्षा बाहर से नहीं आयी थी। संसार में कोई भी ऐसा देश नहीं है, जहाँ इतने प्राचीन काल से शिक्षा के प्रति प्रेम रहा हो और जिसका इतना अधिक शक्तिशाली प्रभाव लम्बे अरसे तक पड़ा हो। वैदिक कवियों से लेकर बंगाली कवि रबीन्द्र नाथ टैगोर से आधुनिक समय तक शिक्षा का अनवरत प्रसार और प्रगति होती रही है और एक के बाद एक शिक्षक और दार्शनिक का पदार्पण यहाँ होता रहा है। इस्लाम के आगमन और उसके प्रारम्भिक शासकों द्वारा धार्मिक अत्याचारों के फलस्वरूप प्राचीन भारत के प्रसिद्ध विद्या केन्द्रों की क्षति हुई थी।

विस्तार

आधुनिक अर्थ में कोई प्राथमिक स्कूल मध्यकाल में नहीं था। लेकिन जिस रूप में प्राचीनकाल में शिक्षा दी जाती थी, उसमें विशेष प्रगति बौद्ध मठों अथवा बिहारों की स्थापना के बाद हुआ। बौद्ध बिहारों में शिक्षा के विभिन्न स्तरों का संगठनात्मक स्वरूप कायम किया गया और उसके अनुरूप शिक्षा दी जाने लगी। दान और सरकारी आर्थिक मदद से हिन्दू और बौद्ध पाठशालाओं का संगठन मंदिरों अथवा मठों में हुआ। यह व्यवस्था काशी, मथुरा, हरिद्वारा, उज्जैन, बंगाल, बिहार और पंजाब में 19वीं सदी तक चलती रही और सम्भवतः देश के अन्य भागों में भी यही व्यवस्था रही। ऐसी अधिकांश पाठशाला निजी स्कूल के जैसे थे। विद्यार्थी और विद्वान ऐसे शिक्षकों के पास शिक्षा ग्रहण करने जाते थे, जो निजी खर्च पर विद्यालय चलाते थे और वे शिक्षक पाठशाला भवन तथा छात्रों के खर्च के लिए

International Journal of Engineering, Management, Humanities and Social Sciences Paradigms (IJEMHS)
Volume 35, Issue 02 and Publication Date: 22nd April, 2023
An Indexed, Referred and Peer Reviewed Journal
ISSN (Online): 2347-601X
www.ijemhs.com

उदार लोगों से दान लिया करते थे। पढ़ाई का तरीका मौखिक था। प्रारम्भिक शिक्षा के लिए कोई अभ्यास पुस्तिका जैसी चीज नहीं होती थी। छात्र वृक्ष के नीचे जमीन पर बैठ जाते थे और शिक्षक खड़े होकर या चटाई या मृगछाल पर बैठकर पढ़ाया करते थे।

हिन्दू अपने पुत्र को उपनयन के बाद पाठशाला में शिक्षा ग्रहण के लिये भेजते थे। विभिन्न जातियों के लिये अलग–अलग उम्र का विधान था। लेकिन साधारण तौर पर पाँच वर्ष के उम्र में छात्र–छात्राएँ पाठशाला भेजे जाते थे। इन स्कूलों में पंडित अक्षर बोध दिया करते थे। कोई छपी प्राईमर की पुस्तक नहीं थी। विद्यार्थियों को अक्षर ज्ञान और पहाड़ा का ज्ञान लकड़ी की तख्तियों पर अथवा जमीन पर लिखा कर करवाया जाता था। साधारणतया छात्र वृक्ष के छाये के नीचे जमीन पर कतार में बैठते थे और गुरू चटाई या हिरण के छाल पर बैठते थे। मिले–जूले शब्दों या संयुक्ताक्षरों का अभ्यास लगातार कराया समझाया जाता था। हिज्जे को रटाया जाता था और उनके अर्थों को भी कराया जाता था। लेखन कला की भी अच्छी शिक्षा दी जाती थी। पाठशाला में धार्मिक शिक्षा हिन्दू छात्रों को दी जाती थी या नहीं इसका स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता है, लेकिन कुछ विदेशी यात्रियों ने यह उल्लेख किया है कि शब्द की जानकारी के बाद पुराणों की शिक्षा और रामायण की शिक्षा दी जाती थी। मालिक मुहम्मद जायसी पद्मावत में भी इसका उल्लेख करते हैं। इसके साथ ही प्रारम्भिक गणित की भी शिक्षा दी जाती थी। हिन्दू गणित में अधिक प्रवीण होते थे। पहाड़ों को याद करवा दिया जाता था। सभी छात्र एक साथ पहाड़ों को याद करते थे, जिसे कोई एक छात्र शुरू में पढ़ता था। उदाहरणर्थ एक दूना दो, दो दुना चार इत्यादि पढ़ाने का नियम आज के समान प्रचलित थी।

उस समयय तीन प्रकार के विद्यालय थे। प्रथम प्रकार के विद्यालय में व्याकरण कविता, पुराणों एवं स्मृतियों की शिक्षा दी जाती थी। दूसरे प्रकार के विद्यालयों में कानून एवं पुराणों की शिक्षा दी जाती थी। तीसरें प्रकार के विद्यालयों में न्याय, दर्शन अथवा तर्क की शिक्षा प्रदान की जाती थी। बनारस में भिन्न–भिन्न विषयों के लिए अलग–अलग महाविद्यालय थे, जिसे ''टोल'' की संज्ञा दी जा सकती है। इन महाविद्यालयों में वेद, व्याकरण, काव्य, तर्कशास्त्र, कानून, गणित और

ज्योतिष की शिक्षा दी जाती थी। सुबह और शाम दो बार पढ़ाई की जाती थी। एक शिक्षक के साथ औसतन चार–पाँच छात्र पढ़ते थे। कभी–कभी यह संख्या प्रन्दह भी हो जाती थी। वरीय छात्र, शिक्षक को निम्नवर्ग के छात्रों को शिक्षा प्रदान करने में मदद किया करते थे। ब्राह्मण शास्त्रकारों के अनुरूप शिक्षा के लिये कोई शुल्क नहीं लिया जाता था। पुराण में धन की प्राप्ति के लिए शिक्षा देने वाले शिक्षक की भर्त्सना की गई है। मनु ने भी इसे पाप–युक्त कार्य माना है। शिक्षक मुख्यतः धनी, कुलीन वर्ग और व्यापारी पर शिक्षण खर्च के लिये निर्भर होते थे। ऐसे लोग उदारतापूर्ण ढंग से शिक्षकों को मदद किया करते थे।

शिक्षक छात्रों से अधिक सम्मान प्राप्त करते थे एवं छात्र शिक्षकों का आदरपूर्वक चरणस्पर्श करते थे और उनके आदेश के अनुरूप ही वह उनसे अपनी इच्छा व्यक्त करते थे। अगर कोई छात्र शिक्षक के साथ अभद्र व्यवहार करते थे तो उन्हें स्कूल से निष्कासित कर दिया जाता था। बारतो लोमां ने यह लिखा है कि इस प्रकार हिन्दू गुरू अपने छात्रों से पूर्ण सम्मान प्राप्त करते थे और छात्र उनके आज्ञाकारी हुआ करते थे। अकस्मात ही कभी कोई छात्र गुरू से अभद्र व्यवहार करते थे, ऐसे छात्रों को सामान्य दण्ड दिया जाता था। उन्हें कई अध्यायों को दस से प्रन्द्रह बार लिखने को कहा जाता था या स्कूल में छुट्टी के बाद भी रोक लिया जाता था। साधारण शारीरिक दण्ड जैसे झूककर दोनों पैरों के नीचे हाथ डालकर कान पकड़ने का आदेश दिया जाता था।

शिक्षक–छात्र सम्बन्ध उत्तम था। शिक्षक छात्रों से पुत्रवत् व्यवहार करते थे। छात्रों के बीच का भी सम्बन्ध मधुर था। छात्र परस्पर मित्रवत् व्यवहार करते थे और एक दूसरे की मदद करने में प्रसन्नता का अनुभव करते थे। विद्यालय के बाहर भी जब ऐसे छात्र आपस में मिलते थे, तो उनमें प्रेम का भाव होता था।

सभी शिक्षक, वर्ग में बिना लिखित नोट या पुस्तक की मदद से, शिक्षा प्रदान करते थे। उन्हें अपने विषय के समस्त शास्त्रों का कंठसथ ज्ञान रहता था और जिह्वा पर सारी पुस्तकों की सूची होती थी। किस भी गहन और कठिन प्रश्नों के उत्तर के लिये वे उपयुक्त पुस्तक भी तत्काल बता दिया करते थे।

हिन्दू शिक्षण विधि :

International Journal of Engineering, Management, Humanities and Social Sciences Paradigms (IJEMHS)
Volume 35, Issue 02 and Publication Date: 22nd April, 2023
An Indexed, Referred and Peer Reviewed Journal
ISSN (Online): 2347-601X
www.ijemhs.com

बिहार के मिथिला क्षेत्र में हिन्दू संस्थाओं में ''टोल'' और ''पाठशाला'' का नाम उल्लेखनीय हे। संस्कृत स्कूल अथवा महाविद्यालय को ''चतुष्पथी'' और स्थानीय अप्रभंश में ''चौपार'' के नाम से जाना जाता था। इस तरह के महाविद्यालय में चार शास्त्रों– जैसे व्याकरण, न्याय अथवा कानून पुराण अथवा दर्शन की शिक्षा दी जाती थी। इसे पिफर बाद में टोल के नाम से ही जाना जाने लगा। अतः पूर्व मध्यकाल को मध्यकाल में चतुष्पथी एक विशेष महत्त्वपूर्ण शिक्षा संस्थान मिथिला का था जिसकी चर्चा अनेक विद्वानों ने की हे। शिक्षण केन्द्र के अतिरिक्त निजी तौर पर विद्वान–शिक्षक अपने यहाँ शिक्षा प्रदान करते थे। ऐसे संस्थानों का संचालन स्वयं गुरू किया करते थे। छात्र गुरू के मिट्टी और खरों से बने हुए पवित्र घरों की शिक्षा ग्रहण करते थे। ये सारे शिक्षण संस्थान पवित्र और उपयुक्त हुआ करता था।

मिथिला पर ओइनवार काल में तुर्कों का आक्रमण हुआ था। पिफर भी इस राजवंश के दरवार में विद्वानों को विशेष महत्व दिया जाता था। जगधर, विद्यापति, शंकर मिश्र एवं वाचस्पति मिश्र उस समय के महान विचारक, विद्वान लेखक एवं कवि थे। खंडेलवाल राजवंश के पूर्वतक यह परम्परा चलती रही थी। मिथिला संस्कृत शिक्षा, न्याय और ज्योतिष का केन्द्र था। यह अवस्था बंगाल के नव–द्वीप न्याय स्कूल की स्थापना के समय तक बनी हुई थी। खंडेलवाल राजवंश 1556 ई0 के बाद तक का काल मिथिला में ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में अभिवृद्धि का स्वर्णयुग कहा गया है।

ज्ञान के साथ उच्चारण, पढ़ना–लिखना और संबंधित विषय जैसे व्याकरण तथा धर्मशास्त्र को कंठस्थ कराया जाता था। गणित का सामान्य उपयोगी ज्ञान मात्र दिया जाता था। संस्कृत व्याकरण के नाम हो जाने पर पुराण और अन्य धर्मशास्त्रों की शिक्षा–दीक्षा दी जाती थी। हिन्दू शिक्षण पद्धति का पूरा ख्याल रखा जाता था।

हिन्दू मुख्य रूप से चतुष्पद्वियों में उच्च शिक्षा ग्रहण करते थे, जिसमें मुख्य चार शास्त्र–व्याकरण, न्याय, पुराण और दर्शन की शिक्षा दी जाती थी। शिक्षा की भाषा संस्कृत थी और इसी भाषा में गुरू शिक्षा दिया करते थे। इन शिक्षण संस्थानों में दूर–दूर से आये छात्र और शिक्षकों को विशेष महत्व दिया जाता था। वास्तव में बिहार विद्वानों का केन्द्र बन गया था। दूर–दूर से छात्र यहां शिक्षा ग्रहण करने आते

थे। नालंदा के जैसे भारत के विभिन्न भागों से न्याय अथवा तर्कशास्त्र के विशिष्ट शिक्षा के लिए विद्वान आते थे। प्रायः और अपराहन् दोनों समय शिक्षक वर्ग में शिक्षण कार्य किया करते थे। दोनों वर्ग के बीच स्नान, भोजन और अभ्यास के लिए तीन घंटे की छुट्टी दी जाती थी। छात्रों की संख्या और अन्य कारणों से अगर शिक्षक वर्ग नहीं ले सकते थे, तो वैसी अवस्था में रात्रि में भी वे वर्ग लिया करते थे। शिक्षक छात्रों के साथ उचित न्याय किया करते थे।

महाविद्यालयों में शिक्षण कार्य छात्रों की अधिक संख्या के कारण अगर शिक्षक नहीं कर पाते थे, तो उच्च वर्ग के छात्र अपने से निम्न वर्ग के छात्रों को पढ़ाते थे और इस प्रकार अपने विषय का अभ्यास करते हुए शिक्षण कार्य का भी अनुभव प्राप्त करते थे। छात्रों को उनके प्रगति के अनूकूल वर्ग में बैठने दिया जाता था। छात्र, शिक्षक के समक्ष बैठते थे और उस वर्ग के सबसे अच्छे छात्र सम्बन्धित विषय के पुस्तक को तीव्र आवाज में पढ़ते थे तथा उसका अर्थ शिक्षक छात्रों को आवश्यकतानुसार बताते थे। शिक्षक हर हालत में छात्रों को पूरी मदद किया करते थे।

संस्कृत भाषा एवं साहित्य चतुष्पथियों के शिक्षण का मुख्य विषय होता था। शिक्षा का विषय वस्तु–काव्य, व्याकरण, ज्योतिष, छंद, निरूक्त और न्याय दर्शन होता था। बिहार के मिथिला में ब्राह्मण छात्र चारों वेद, इतिहास, पुराण, कोष, छंद, व्याकरण, छः वेदांग, स्वप्नों की व्याख्या, भूकम्प सम्बन्धी ज्ञान, सूर्य और चन्द्र ग्रहणों से सम्बन्धित शिक्षा, पशु और पक्षियों की भाषा इत्यादि का अध्ययन करते थे। क्षत्रिय छात्र, हाथी–घोड़ा, रथ, तीर–धनुष चलाने जैसे सैनिक शिक्षा और मुद्रा की जानकारी प्राप्त करते थे। विद्यापति ऐसे सैनिक विज्ञान की शिक्षा को अनिवार्य बनाने के पक्षधर थे। वैश्य और शुद्र छात्र, कृषि व्यापार और पशुओं के संबंध में शिक्षा ग्रहण करते थे। इस काल में तंत्र की शिक्षा भी महत्त्वपूर्ण हो गई थी। बिहार के हर भग में इस प्रकार की शिक्षा का प्रचार–प्रचार जारी था। बिहार के मधुबनी के समीप–हरिनगर ग्राम–तांत्रिक शिक्षा का प्रधान केन्द्र था। बिहार के सभी क्षेत्रों, जिलों में औषधि विज्ञान की शिक्षा महत्त्वपूर्ण रूप में दी जाती थी लेकिन इससे संबंधित कोई सार्वजनिक स्कूल नहीं था। निजी तौर पर इसकी शिक्षा वैद्यों से प्राप्त

की जाती थी। साकलदीपी ब्राह्मणों ने इस विज्ञान में अपना एकाधिकार स्थापित कर लिया था। नाईयों की जाति के लोग शल्य चिकित्सक का कार्य सीमित रूप से करते थे। लेकिन वैद्यों के रूप में इनका कोई महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं था। इस प्रकार तांत्रिक शिक्षा का भी महत्व था।

इन विषयों के शिक्षण के अतिरिक्त ''मीमांसा और नव्य न्याय'' बिहार के विश्वविद्यालयों में विशिष्ट रूप से दी जाती थी और इसके ज्ञान के लिए मिथिला अन्तर्राष्ट्रीय पैमाने पर प्रसिद्ध हो गया था। पद्यनाभ ने मिथिला में एक अलग व्याकरण शिक्षा को शुरू किया था। इस प्रकार संस्कृत–साहित्य, विज्ञान, तर्क, न्याय, मीमांसा, रतिशास्त्र, ज्योतिष, स्मृति एवं धर्मशास्त्र की शिक्षा उच्च स्तर से दी जाती थी। बिहार का मिथिला शिक्षा के लिए एक उपयुक्त स्थान रखता था।

उपसंहार

इसी काल में बिहार में स्थानीय भाषा या भर्नाकुलर भाषा का भी उत्थान शुरू हुआ था। ज्योतिरीश्वर और विद्यापति ने स्थानीय मैथिली भाषा में साहित्यों की रचना की थी। विद्वान संस्कृत भाषा को छोड़कर अन्य भाषा में लिखने के पक्षधर नहीं थे। संस्कृत भाषा का महत्व अत्यधिक था। इसलिए भी भर्नाकुलर भाषा की अभिवृद्धि तीव्र गति से नहीं हो सकी थी। लेकिन स्थानीय शासकों की प्रेरणा और प्रोत्साहन से संस्कृत विद्वानों ने साहित्य की रचना शुरू की थी। विद्यापति संस्कृत और मैथिली भाषा में साहित्य की विशिष्ट रचनाएँ की थी। विद्यापति ने ''अभट'' में तथा मैथिली में जो गीतों की चरना की थी, वह अपनी मिठास और संगीतलय के लिए संसार भर में आज भी महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं। उनकी इस रचनाओं से मिथिला को विश्व प्रसिद्धी मिली। इसी प्रकार बिहार के अन्य स्थानीय भाषाओं में साहित्यिक रचना का प्रयास शुरू हुआ। भोजपुरी और मगही साहित्य के सृजन का इतिहास मध्यकाल में नहीं मिलता है फिर भी इन स्थानीय भाषाओं के महत्व को कम नहीं आंका जा सकता हे। शिक्षा को सभी लोग ग्रहण करते थे।

–: संदर्भ :–

International Journal of Engineering, Management, Humanities and Social Sciences Paradigms (IJEMHS)
Volume 35, Issue 02 and Publication Date: 22nd April, 2023
An Indexed, Referred and Peer Reviewed Journal
ISSN (Online): 2347-601X
www.ijemhs.com

शर्मा, आर0 एस0–	आस्पेक्ट्स ऑफ पोलिटीकल आइडियाज एण्ड इन्सटीच्युसन्स इन ऐनसियन्ट इण्डिया
शामशास्त्री, आर0	– इभोलूसन ऑफ इण्डियन पोलिटी
	– कौटिल्य अर्थशास्त्र
वर्मा, वी0 पी0	– स्टडीज इन हिन्दू पोलिटीकल थॉट एण्ड इट्स मेटाफिजिकल फाउन्डेसन्स,1953
संस्कृत साहित्य का इतिहास	ले0 डॉ0 उमाशंकर शर्मा 'श्रृषि', चौखम्भा भारती अकादमी, वाराणसी, द्वितीय संस्करण, 2004
संस्कृत साहित्य का इतिहास	ले0 वरदाचार्य, अनु0 डॉ0 कपिलदेव द्विवेदी, प्र0 रामनारायण लाल बेनी प्रसाद, इलाहाबाद, 1989